ISSN 0973-8541, HUMANITIES AND DEVELOPMENT, VOL.19, No.4, Oct. – Dec., 2024/4

कुंभपर्व, गंगा, और प्रयाग की धार्मिक मान्यताएं

प्रो0 डी0पी0 तिवारी एवं अनुष्का ओझा

https://doi.org/ 10.61410/had.v19i4.205

कुंभ का अर्थ घड़ा होता है। इसका निर्माण नव पाषाण काल में हाथ और चाक दो विधियों से किया गया जो आज भी प्रचलन में है। मानव ही नहीं पशुओं को भी जीवन के लिए पानी की आवश्यकता होती है, कारण कि शरीर का 75 अंश पानी ही होता है। इसलिए पानी को अमृत कह दिया जाता है। एक परिभाषा के अनुसार जो अमृतमय जल से पूर्ण कर क्षुत पिपासादि द्वन्द्वों से निवृत्त करता है उसे कुंभ कहते हैं। कुंभयति अमृतेन पूरयति सकल क्षुत पिपासादि द्वन्द्वं जातं निवर्तयति इति कुंभ। भारतीय ज्योतिष में कुंभ 11वीं राशि भी है।

पर्व का तात्पर्य परम पवित्र दिवस पर किसी आयोजन से है। पर्व दो प्रकार के होते हैं 1. लौकिक जिसका अभिप्राय हर्ष–उल्लास एवं आमोद प्रमोद से है जिसके आयोजन से शारीरिक सुख की प्राप्ति होती है। 2. लोकोत्तर पर्व जो मन और आत्मा के उत्कर्ष के लिए आयोजित किए जाते हैं इससे पारलौकिक कल्याण, और सुख की प्राप्ति होती है। कुंभ एक लोकोत्तर पर्व है।

विषय पर जिन ग्रन्थों में स्रोत सामग्री उपलब्ध होती है उनमें ऋग्वेद, अथर्ववेद, रामायण, महाभारत, के अतिरिक्त पुराण साहित्य प्रमुख है। पुराणों में श्रीमद्भागवत पुराण, विष्णु पुराण, स्कन्द पुराण, वामन पुराण, देवीभागवत पुराण, हरिवंश पुराण, पद्म पुराण, अग्नि पुराण, ब्रह्म पुराण, कूर्म पुराण, नारदीय पुराण, और मत्स्य पुराण प्रमुख हैं। पुराणों की रचना मूलतः उन लोगों को इतिहास से परिचित कराने के लिए की गई थी जिनके पास ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए गुरुकुल में जाकर पढ़ने का अवसर नहीं होता था। इनमें शिक्षाप्रद घटनाओं के साथ वंशावलियों का विवरण इतिहास की दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण है। इसी कारण पुराणों को प्रमाण के रूप में मान्यता प्राप्त हैः श्रुतिः प्रमाणं स्मृतयः प्रमाणं पुराणमप्यत्र परं प्रमाणम्। किन्तु पुराणों की अपनी एक विशिष्ट शैली है इसमें कोई जिज्ञासु प्रश्न करता है और कोई अधिकारी व्यक्ति उसकी शंका का समाधान करता है। शंका समाधान करने वाला उस घटना का प्रत्यक्षदर्शी नहीं होता है। घटनाओं के वर्णन के साथ वह समकालीन किसी साहित्य का उल्लेख भी नहीं करता है। प्रायः उसे यह ज्ञान अपने से पूर्व के किसी प्रतिष्ठित विद्वान से प्राप्त हुआ होता है जिसे जिज्ञासु सत्य मानकर स्वीकार करता है। इसलिए पुराणों की शैली कथात्मक और संदर्भ विहीन होते हुए भी स्वयं में प्रमाण है।

पुराणों में वर्णित कुंभ पर्व विषयक विवरण भी इसी प्रकार का है। मूल तथ्य यह है कि देवताओं और दैत्यों ने संयुक्त प्रयत्न से अमृत प्राप्त किया और प्राप्त करते ही उसे बराबर–बराबर बांट कर ग्रहण करने की दोनों पक्षों की मनसा में खोट उत्पन्न हो गया और एक संघर्ष की स्थिति बनी जिस छीना झपटी में कलश से कुछ बूंदे चार स्थानों पर गिरीं।

अमृतं सुरयो लब्ध्वा पीत्वा अमर्त्यतामियुः।
चतुर्थांशो महादेव अमृतस्यावशिष्टतः।। 1
प्रयागे हरिद्वारे च नासिक्यांचोज्जयिन्यां च।
अमृतं पतितं देवि चतुर्थांशेन विष्णुना।।2
तत्र स्नानं जपो होमोदानं चैव महाफलम्।
अमृतकलशस्य पत्तिः कुम्भमेला महोत्यवः।।3
प्रयागे मकर संक्रान्यां हरिद्वारे विषुवत्सु।
नासिक्यां ग्रहणे चैव उज्जयिन्यां सिंहसंक्रान्तौ।।4

- **प्रेसिडेंट/कुलपति, जय मीनेश आदिवासी विश्वविद्यालय, रानपुर, कोटा, राजस्थान**
  पूर्व कुलपति, वीर कुंवर सिंह विश्वविद्यालय, आरा, बिहार।
  पूर्व आचार्य एवं अध्यक्ष, प्राचीन इतिहास, पुरातत्व एवं संस्कृति विभाग, लखनऊ, विश्वविद्यालय लखनऊ।
- **सहायक आचार्य, श्री कल्लाजी वैदिक विश्वविद्यालय, निम्बाहेड़ा, चित्तौड़गढ़, राजस्थान।**

कुम्भ मेला महोत्सवः सर्वेषां च महाफलः।
स्नानजपहोमदानानां फलं चैवमहाद्भुतम्।।5
तत्र स्नात्वा जप्त्वा हुत्वा चैव महादानम्।
अमृतस्याप्तिर्भवति नात्र कार्या विचारणा।।6
ब्रह्माविष्णुशिवादीनां स्नानजपहोमदानात्।
कुम्भ मेला महोत्सवात्फलम्।। 7 स्कन्द पुराण, 31/1–10

जिन खगोलीय स्थितियों में जहां–जहां ये बूंदें गिरी थीं वह खगोलीय स्थिति जब दुबारा आती है तो उन स्थानों पर कुम्भ या अर्धकुंभ पर्व का आयोजन किया जाता है। ये चारो स्थान और वहां अमृत बूंदों के गिरने की खगोलीय स्थिति इस प्रकार हैः

1. जब वृहस्पति कुंभ राशि में हों और सूर्य मेष राशि में प्रवेश करते हैं तो हरिद्वार में कुंभ होता है।
2. जब सूर्य और वृहस्पति सिंह राशि में प्रवेश करते हैं तब नासिक मे कुंभ पर्व होता है।
3. जब वृहस्पति सिंह राशि में और सूर्य मेष राशि में प्रविष्ट होते हैं तो उज्जैनी में कुंभ (सिंहस्थ) होता है।
4. स्कन्द पुराण के अनुसार जब वृहस्पति मेष राशि में हों और सूर्य तथा चन्द्रमा मकर राशि में प्रविष्ट हों तथा माध मास की अमावस्या हो तो प्रयाग में कुंभ होता है।

मेष राशिं गते जीवे मकरे चन्द्र भास्करौ।
अमावस्या तदा योगः कुंभाख्यस्तीर्थ नायके।। स्कन्द पुराण, अवन्ति खण्ड,35/22–23

एक दूसरी स्थिति यह है किः

मकरे च दिवानाथे वृष राशि गते गुरौ।
प्रयागे कुंभ योगो वै माघ मासे विधुक्षये।। स्कन्द पुराण, अवन्ति खण्ड, 35/24

यह स्थिति प्रत्येक 12 वर्ष आती है तब पूर्ण कुंभ और 6 वर्ष पर अर्ध कुंभ का पर्व संपन्न होता है। संभवतः इन्हीं अवसरों पर सम्राट हर्ष वर्धन प्रयाग में दानोत्सव किया करते थे। यद्यपि ह्वेनसांग इसका आयोजन प्रति पॉच वर्षों के अन्तराल पर किए जाने का उल्लेख करते हैं। इन चारो स्थानों पर अमृत की बूंदों के गिरने का उल्लेख श्रीमद् भागवत पुराण और विष्णु पुराण में नहीं मिलता है।

प्रश्नगत अमृत किस प्रकार प्राप्त हुआ इसका वृत्तान्त विभिन्न पुराणों में अलग–अलग ढंग से दिया गया है, जिसे समुद्र मंथन कहा गया है। विष्णु पुराण में उल्लेख है कि एक बार ऋषि दुर्वासा किसी वन प्रान्त में भ्रमण कर रहे थे, किसी अप्सरा ने उन्हें एक अति सुगंधित माला दिया जिसे उन्होंने देवराज इन्द्र को दे दिया जिसे उन्होंने अपने वाहन ऐरावत के मंस्तक पर रख दिया। माला के फूलों के गन्ध से मधुमखिक्यां आकर्षित होने लगीं तथा ऐरावत को पीड़ित करने लगी जिसके कारण उसने माला को फेंक दिया और पैरों तले कुचल दिया। इसे देख कर दुर्वासा ऋषि कुद्ध हो गए और उन्होंने इन्द्र को श्राप दे दिया कि हे मूर्ख मेरे द्वारा दी गई माला की तुमने आदर नहीं किया इसलिए तीनों लोकों में तुम श्रीविहीन हो जाओगे[1]।

मया दत्तां इमां मालां यस्मान्नबहुमन्यसे।
त्रैलोक्य श्रीरतो मूढ़ विनाशमुपास्यति।। विष्णु पुराण 9/14

परिणाम स्वरूप इन्द्र के राज्य में विपन्नता व्याप्त होने लगी जिससे त्रस्त होकर उचित उपाय की तलाश में इन्द्र ब्रह्मा जी के पास गए और उनसे सब निवेदित किया। यह सुनने के बाद ब्रह्मा जी ने उनसे विष्णु जी के पास जाने को कहा, वही इसका निदान कर सकने में सक्षम होंगे। सभी देवता विष्णु जी के पास जाकर उन्हें प्रसन्न किए और अपनी व्यथा सुनाई। ऐसे अवसर पर विष्णु जी ने उन देवताओं को कूटिनीति से काम लेने को कहा और सलाह दिया कि आप सभी का उद्येश्य बड़ा है

इसलिए आप सभी दैत्यों से मित्रता कर समुद्र मंथन करो इसके लिए वे जो भी शर्त रखें सब स्वीकार कर लो। अभीष्ट सिद्ध हो जाने के बाद उनके साथ सर्प और मूषक का व्यवहार करना।

अरयोऽपि हि संध्येयाः सति कार्यार्थ गौरवे ।
अहि मूषक वद् देवा ह्यर्थस्य पदवीं गतैः।। श्रीमद्भागवत पुराण 1/8/20

श्रीमद्भागवत पुराण के प्रथम खण्ड के 8वें स्कन्ध के अध्याय 6–10 में समुद्र मंथन का विवरण विस्तार से इस प्रकार दिया गया हैः विष्णु के परामर्श के अनुसार देवता गण ने दैत्यराज बलि के पास जाकर पूरे प्रस्ताव को बताया जिसे बलि सहित उसके सेनापतियों संबर, अरिष्टनेमि और त्रिपुरनिवासी ने स्वीकार कर लिया। देवताओं और दैत्यों ने मिल कर मंदार पर्वत को उखाड़ लिया और लेकर चलने लगे किन्तु मंदार पर्वत के लुढ़क जाने के कारण उसके नीचे दब कर कई दैत्य मृत्यु को प्राप्त हुए तथा अनेक घायल होकर निरुत्साहित हो गए। इस निराशा की स्थिति में विष्णु जी ने गरुण की मदद से मंदराचल को उठा कर क्षीर सागर में स्थापित कर दिया। देवताओं ने नागराज वासुकी को अमृत का भाग देने का आश्वासन देकर नेती बनने के लिए सहमत कर लिया और समुद्र मंथन के लिए तैयारी पूर्ण कर ली गई। विष्णु जी के निर्देशानुसार सभी प्रकार की औषधियॉ लाकर क्षीरसागर में डाली गईं और मंथन प्रारम्भ किया गया परिणामतः जल का मल घोर हालाहल के रूप में प्रकट हुआ जिससे बचने के लिए सभी ने शिव जी से अनुरोध किया जिसे स्वीकार कर उन्होंने विष का पान कर लिया। विष पान करते समय कतिपय बूंदे जमीन पर गिर गईं जिसे सांप और बिच्छुओं ने ग्रहण कर लिया जिससे वे बिषैले हो गए। फिर क्रमशः समुद्र मंथन से अन्य रत्न उत्पन्न हुए यथाः कामधेनु जिसे ऋषियों ने लिया, उच्चैःश्रवा जिसे बलि ने ले लिया, ऐरावत जिसे इन्द्र ने ग्रहण किया, कौस्तुभ मणि जिसे विष्णु ने ग्रहण किया, कल्पवृक्ष जो सर्व सुलभ हुआ, अप्सराएं जो देवताओं को प्राप्त हुईं, लक्ष्मी जिन्होंने विष्णु का वरण किया और अन्त में अमृत कलश के साथ धन्वन्तरि प्रादुर्भूत हुए। दैत्यों ने उनके हाथ से अमृत कलश छीन कर अपने कब्जे में कर लिया जिससे देवता बहुत निराश हुए किन्तु विष्णु ने अपनी माया से उनमें फूट डाल दी और सभी आपस में अमृत पीने के लिए झगड़ने लगे। इसी बीच विष्णु एक अत्यन्त रूपवती स्त्री का रूप धारण कर उनके बीच में उपस्थित हुए जिसे देखकर दैत्य उसकी ओर आकर्षित हो गए और उसी से अमृत के विभाजन के लिए राजी करने लगे। सुन्दरी ने सावधान किया कि स्त्री और अप्रशस्त कुल की होने के कारण उससे कुछ असावधानी हो सकती है, यदि इसे सब लोग स्वीकार करें तो वह अमृत का विभाजन कर सकती है। सभी ने प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया। फिर रूपवती ने देवताओं और दैत्यों को दो अलग–अलग पंक्तियों में बिठाया और देवताओं की तरफ से अमृतपान कराना प्राारम्भ किया। चालाकी से एक दैत्य राहु ने रूप बदल कर देवताओं की पंक्ति में बैठ कर अमृत पान कर लिया जिसका उद्घाटन सूर्य और चन्द्र ने कर दिया तो स्त्री वेशधारी विष्णु ने उसका शिरच्छेद कर दिया जिससे उसका शरीर तो मृत हो गया किन्तु अमृत पान कर लेने के कारण उसका शिर अमर हो गया तब विष्णु ने उसे राहु नामक ग्रह के रूप में स्थापित कर दिया जो वर्ष में एक बार सूर्य और चन्द्र को निगलने का प्रयास करता है जिसे सूर्य ग्रहण और चन्द्र ग्रहण के नाम से जानते हैं। अमृत पान कर देवता बलवान हो गए और उन्होंने अपना खोया राज्य प्राप्त कर लिया। यह विवरण शुकदेव ने परीक्षित को सुनाया था[2]।

अब प्रश्न उठता है कि क्षीर सागर कहां था और मंदार पर्वत की स्थिति कहां थी जिससे समुद्र मंथन का क्षेत्र नियत किया जा सके। विष्णु पुराण में प्राचीन भूगोल का वर्णन है जिसमें सप्त द्वीपों जम्बू द्वीप, प्लक्ष द्वीप, शाल्मल द्वीप, कुश द्वीप, क्रोंच द्वीप और पुष्कर द्वीप का उल्लेख है। क्षीर सागर क्रौंच द्वीप को घेरता था[3]। आज इसके समीकरण के विषय में कई मत प्राप्त होते हैं। प्रथम अवधारणा है कि क्षीर सागर बंगाल की खाड़ी में बंग्ला देश के पास था जबकि मंदार पर्वत कम्बोडिया के समीप था जो अब समुद्र में जलमग्न हो गया है। दूसरी धारणा के अनुसार प्राचीन सिन्धु सागर जो आज के पाकिस्तान के थट्टा के पास था, क्षीर सागर था और मंदार पर्वत इण्डोनेशिया में पापुआ पहाड़ी था। तीसरी अवधारणा के अनुसार टर्की के पास स्थित वर्तमान काला सागर प्राचीन क्षीर सागर था, इसी में विष्णु शेषनाग पर शयन करते थे। मंदार पर्वत प्राचीन यूनान में माउण्ट माण्डा था जबकि अन्य मत के

अनुसार अल्जीरिया का मुण्ड्रा पर्वत मंदार पर्वत था। एक अध्ययन के अनुसार 5600 ईसा पूर्व में अतिवृष्टि के कारण काला सागर में जलाधिक्य हो गया और अतिरिक्त जल प्रवाहित होने लगा जिससे बास्फोरस जलसन्धि का निर्माण हुआ। यह प्रवाहित जल मरमरा सागर में जा मिला और वहां भी जल अधिक होने से प्रवाहित होने लगा जिससे डार्डेन्स जलसंधि का निर्माण हुआ जिससे प्रवाहित होता जल एजियन सागर में मिला। यही दोनों जलसंधियां आज एशिया को यूरोप से अलग करती हैं। बास्फोरस जलसंधि टर्की को दो भागों में पृथक् करती है परिणामतः उसका उत्तरी भाग यूरोप एवं दक्षिणी भाग एशिया में आता है[4]।

चौथी मान्यता के अनुसार मंदार पर्वत बिहार के भागलपुर जनपद के बोंसी ब्लाक में भागलपुर से दुमका जाने वाली सड़क के किनारे 45 किलोमीटर की दूरी पर बांका में स्थित है। इसकी ऊँचाई 700 फीट है। यहीं पर 12वें तीर्थंकर वासुपूज्य ने निर्वाण प्राप्त किया था। इस पहाणी पर एक विष्णु और एक जैन मंदिर बना है। पहाड़ी के सामने एक पोखरा बना है जिसके बीच में विष्णु और लक्ष्मी का एक मंदिर है। इस पोखरे को पापहारिणी कहते हैं। स्थानीय लोग इसे क्षीर सागर और मंदार पर्वत के साथ समीकृत करते हैं और उसी भाव से यहां धार्मिक कृत्यों का संपादन भी करते हैं[5]। मार्कण्डेय पुराण में क्षीर सागर को क्रौंच द्वीप को आवृत्त करने वाला और मंदार पर्वत को विष्कम्भ पर्वत के पूरब में स्थित बताया गया है[6] जिससे इसकी स्थिति मानसरोवर के आस–पास प्रतीत होती है[7]।

इसी क्रम में समुद्र मंथन की तिथि ज्ञात करने का प्रयत्न किया जा सकता है। इसके लिए सूर्य वंश की वंशावली का आलंबन लिया जा सकता है जिसके द्वारा भगीरथ की तिथि प्राप्त की जा सकती है। पुराणों में भगीरथ को गंगा को पृथ्वी पर लाने का श्रेय दिया गया है। अतः समुद्र मंथन की तिथि गंगावतरण के पश्चात ही होना सुनिश्चित है, क्योंकि अमृत की कुछ बूंदों के गंगा में गिरने का उल्लेख मिलता है। सूर्य वंश में मनु वैवस्वत, इक्ष्वाकु, हरिश्चन्द्र, रोहित, सगर, अंशुमान, दिलीप, भगीरथ, सुहोत्र, श्रुति, ककुस्थ, रघु, अज, दशरथ, राम जैसे अनेक प्रतापी राजा हुए थे जिसमें भगीरथ तिरपनवीं पीढ़ी में उत्पन्न हुए थे। उनके बाद अगली 27वीं पीढ़ी में राम उनके बाद अगली 9वीं पीढी में बृहद्बल उत्पन्न हुए थे जिन्होंने महाभारत युद्ध में भाग लिया था। इसी वंश में आगे चलकर 22वीं पीढ़ी में कोशल नरेश प्रसेनजित का जन्म हुआ था। प्रसेनजित का समय 483 ई0पू0 भली भॉति ज्ञात है। प्राचीन काल में चार आश्रमों की व्यवस्था थी और ब्रह्मचर्य आश्रम की समाप्ति के बाद विवाह संस्कारोपरान्त ही संतानोत्पत्ति होती थी। अतः दो पीढ़ियों के बीच में 25 वर्ष का अन्तर होना स्वाभाविक था। इसी को आधार मानकर बृहद्बल का समय 483+ (22×25=550)=1033 ई0 पू0 प्रतीत होता है। इसी प्रकार राम का समय 1033+ (9×25=225)=1258 ई0 पू0 नियत किया जा सकता है। इससे 27 पीढ़ी पहले भगीरथ का समय 1258+ (27×25=675)=1933 ई0 पू0 नियत होता है। अभी हाल ही में डॉ0 बी0 आर0 मणी द्वारा अयोध्या में किए गए उत्खनन से निचले स्तर से जो रेडियो कार्बन तिथियॉ प्राप्त हुई हैं वे भी 1200 से 1600 ई0 पू0 के बीच की हैं।

आजकल संगणक की सहायता से प्लैनेटोरियम सॉफ्टवेयर की मदद से प्राचीन काल के ग्रहों की स्थित नियत करते हुए ज्ञात किया जाता है कि पीछे की कोई विशिष्ट ग्रह युति कितने वर्षों पूर्व रही होगी। वाल्मीकि रामायण में श्री राम के जन्म के समय की ग्रहों स्थिति इस प्रकार वर्णित हैः यज्ञ समाप्ति के पश्चात् जब छः ऋतुएं बीत गईं तब बारहवें मास में चैत्र शुक्ल की नवमी तिथि को कौसल्या देवी ने दिव्य लक्षणों से युक्त सर्वलोक वंदित श्री राम को जन्म दिया। उस समय (सूर्य, मंगल, शनि, गुरु और शुक्र) ये पांच ग्रह अपने–अपने उच्च स्थान पर विराजमान थे तथा लग्न में चन्द्रमा के साथ बृहस्पति विराजमान थे[8]। इस विधि से की गई गणना से श्रीराम के जन्म का समय 5114 ई0 पू0 आता है[9]। चूंकि भगीरथ श्रीराम से 675 वर्ष पूर्व हुए थे अतः उनकी तिथि 5114+ 675=5789 ई0 पू0 आती है। प्रयाग में गंगा के आने का यही समय हो सकता है। प्रयाग विश्वविद्यालय के प्राचीन इतिहास संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग द्वारा झूसी प्राचीन प्रतिष्ठान पुरी के उत्खनन से निचले स्तर से प्राप्त रेडियो कार्बन तिथियां इससे मेल खाती हैं। अतः यही सहस्राव्दी समुद्र मन्थन की तिथि स्वीकार की जा सकती है।

यहॉ एक अन्य प्रश्न यह उत्पन्न होता है कि गंगा तो दीर्घकाल से पृथ्वी पर प्रवाहित होने वाली एक जलधारा है इसे इस हद तक की मान्यता कैसे प्राप्त हो गई कि इसमें स्नान करने से मोक्ष/स्वर्ग की प्राप्ति होती है। इसके लिए गंगा के विषय में प्राचीन भारतीय साहित्य में वर्णित उल्लेखों की समीक्षा करनी होगी जहां गंगा एक स्त्री और एक नदी के रूप में वर्णित है। पद्म पुराण, नवम् स्कन्ध के अध्याय 6–8 के अनुसार विष्णु की तीन पत्नियां थींः लक्ष्मी, सरस्वती और गंगा। इनमें सरस्वती और गंगा के बीच में प्रतिस्पर्धा अधिक थी। एक प्रसंग में नाराज होकर सरस्वती ने गंगा को मृत्यु लोक में नदी बनकर प्रवाहित होने का श्राप दे दिया तो पलट कर गंगा ने भी वैसा ही श्राप सरस्वती को दे दिया जिससे ये दोनों देवपत्नियां पृथ्वी पर नदी रूप में प्रवाहित हुईं और भूलोक वासियों के मध्य देवी के रूप में मान्यता को प्राप्त हुईं।

देवीभागवत पुराण[10] के अनुसार सूर्यवंशीय राजा महाभिष बड़े प्रतापी और धर्मशील थे जिससे उन्हें स्वर्ग में स्थान प्राप्त हुआ। एक बार ब्रह्मा की एक सभा में देवता, ऋषि और गंधर्व एकत्र हुए जिसमें महाभिष तथा ब्रह्मा की पुत्री गंगा भी उपस्थित थीं। उसी समय हवा के एक झोंके से गंगा का वस्त्र उसके शरीर से गिर गया। ऐसा देख कर देवताओं और ऋषियों ने अपना शिर नीचे कर लिया परन्तु गंगा और महाभिष एक दूसरे को अविचल निगाह से देखते रहे। इसे देख कर ब्रह्मा ने दोनों को मृत्यु लोक में जन्म लेने का श्राप दे दिया और यह भी कहा कि गंगा बार–बार महाभिष का हृदय विदीर्ण करेगी। गंगा इसी नाम से स्त्री रूप में और महाभिष शान्तनु के रूप में जन्म लिए और शान्तनु ने गंगा को पत्नी के रूप में इस शर्त के साथ प्राप्त किया कि वे गंगा को किसी भी कार्य से नहीं रोकेंगे। ब्रह्मा की पुत्री होने के कारण वह जगती पर देवी के रूप में प्रतिष्ठित हुई और उसकी मानवीय मूर्तियां बनीं।

तीसरी मान्यता के अनुसार जब राजा बलि की यज्ञशाला में विष्णु नें तीनों लोकों को नापने के लिए अपना पैर फैलाया तब उनके बांए पैर के अंगूठे से ब्रह्माण्डकटाह का ऊपर का भाग फट गया और एक जलधारा निकली जिसने विष्णु के चरणों का स्पर्श किया और भगवत्पदी कहलाई। उस धारा के स्पर्श से संसार के सारे पाप नष्ट हो जाते हैं किन्तु वह सदा निर्मल ही रहती है। वही चन्द्र मंडल को आप्लावित करती हुई मेरु के शिखर पर ब्रह्मपुरी में गिरी। वहां से सीता, अलकनन्दा, चक्षु और भद्रा नाम से चार धाराओं में विभक्त होकर, चारो दिशाओं में बहती हुई समुद्र में मिली[11]।

महाभारत, वनपर्व अध्याय 104 से 108 में वर्णित विवरणानुसार राजा सगर के दो पत्नियां थीं वैदर्भी और शैव्या। बहुत दिनों तक कोई संतान न उत्पन्न होने के कारण सगर ने पत्नियों सहित कैलाश पर तप किया जिससे प्रसन्न होकर शिव ने वैदर्भी से 60 हजार और शैव्या से एक पुत्र उत्पन्न होने का वर दिया। एतदनन्तर राजा सगर ने अश्वमेध यज्ञ का आयोजन किया और यज्ञ का अश्व छोड़ा गया जिसकी रक्षा के लिए सगर के 60 हजार पुत्र उसके पीछे–पीछे चले। इसी बीच इस अश्व को इन्द्र ने कपिल मुनि के आश्रम में छुपा दिया। सगर पुत्रों ने अश्व की बहुत खोज की किन्तु वह नहीं मिला तब उन्होंने जमीन को खोदना प्रारम्भ किया और पाताल में कपिल मुनि के आश्रम में बंधा हुआ पाया। उनको यह भ्रान्ति हुई कि कपिल ने ही अश्व को चुराया है और ऋषि कपिल के विषय में अनुचित कहने लगे। जिसे सुनकर ऋषि ने क्रुद्ध होकर उन्हें भस्म कर दिया। बहुत दिनों तक पुत्रों के वापस न आने पर सगर ने अपने पौत्र अंशुमान को उन्हें ढूढने का दायित्व दिया। अंशुमान ने पाताल लोक में कपिल के आश्रम में घोड़े को बंधा हुआ पाया। तब उन्होंने विनम्रता से ऋषि को प्रसन्न किया और अश्व को वापस ले जाने की अनुमति ली तथा अपने 60 हजार पितरों के उद्धार का उपाय भी पूंछा। कपिल ने बताया कि गंगा के जल के स्पर्श ही इनका उद्धार हो सकेगा। अंशुमान ने घोड़े को यज्ञशाला में पहुंचाकर पिता के यज्ञ को पूर्ण कराया और तप से प्रसन्न करके गंगा को पृथ्वी पर लाने के लिए हिमालय की ओर प्रस्थान किया किन्तु वे गंगा को पृथ्वी पर न ला सके। इसी तरह का प्रयास दिलीप ने भी किया किन्तु वे भी सफल नहीं हुए। पुनः भगीरथ ने दीर्घकालीन तप से गंगा को प्रसन्न किया और गंगा शिव की जटा से होती हुई धरती पर आईं और सगरपुत्रों का उद्धार करती हुई समुद्र से जा मिली[12]। गंगावतरण का इसी प्रकार का विवरण श्रीमद् भागवत पुराण में भी मिलता है[13]। नारद

पुराण में कहा गया है कि गंगा कृष्ण पक्ष की षष्ठी से अमावस्या तक 10 दिन पृथ्वी पर निवास करती है, शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा से लेकर दशमी तक वह पाताल में रहती है और शुक्ल पक्ष की एकादशी से कृष्ण पक्ष की पंचमी तक 10 दिन स्वर्ग में रहती है। इसीलिए उसे त्रिपथगा और मोक्षदायिनी कहा गया है[14]। पुराणों और महाभारत का यही विवरण गंगा के जल को पवित्रता प्रदान करने वाला हुआ और यह मान्यता प्रतिष्ठित हुई कि जो गंगा में स्नान करेगा उसे मोक्ष प्राप्त होगा और गंगा नदी पाप नाशिनी तथा मोक्षदायिनी बन गई। पुराणों ने गंगा के धार्मिक महत्व को गंगा माहात्य अध्याय[15] में इतना विस्तारित किया कि गंगा में स्नान, उसका गुणगान, उसका दर्शन, उसके किनारे तर्पण–पिण्डदान, अथवा अन्य दान आदि करने से अनुष्ठाता और उसके मृतक संबंधियों को पाप से छुटकारा मिलेगा और उन सभी को स्वर्ग प्राप्त होगा। प्रयाग में गंगा में मकर संक्रान्ति, पौष पूर्णिमा, मौनी अमावस्या, बसंत पंचमी, माघी पूर्णिमा जैसे पर्वों पर स्नान का अतिरिक्त बृहत्फल बताया गया है।

धरती पर जैसे अन्य ग्राम या नगर हैं उसी प्रकार प्रयाग भी एक नगर है, परन्तु इसे विशिष्ट धार्मिक मान्यता क्यों प्राप्त है? पुराण इस शंका का भी समाधान करते हैं। उनके अनुसार ब्रह्मा ने यहां यज्ञ किया था। इसी कारण इसे प्रयाग कहा जांता है[16]। प्रयाग, प्रतिष्ठानपुर, कम्बलाश्वतर और भोगवती में ब्रह्मा की बेदियां हैं। यह देवों की यज्ञ भूमि है, यहां साठ करोड़ दस हजार तीर्थों का वास है, इसलिए प्रयाग को विशिष्ट धार्मिक महत्व प्राप्त हुआ[17]।

ऋषि पुलस्त्य ने युधिष्ठिर को प्रयाग के विषय में बताते हुए कहा था कि प्रयाग में ब्रह्मादिक देवता, दिशा, दिक्पाल, लोकपाल, साध्य, नैऋत, पितर, सनत्कुमार आदि ऋषि, अंगिरादिक महर्षि, नाग, सुपर्ण सिद्ध, चक्रधर, सूर्यादिक आकाशचारी, नदी, समुद्र, गन्धर्व, अप्सरा और प्रजापति सहित विष्णु निवास करते हैं। प्रयाग में तीन अग्निकुण्ड हैं। गंगा और यमुना के बीच का स्थान पृथ्वी का जघन है। जो व्रतधारी गंगा और यमुना में स्नान करता है उसे राजसूय और अश्वमेध का फल प्राप्त होता है। यह देवों की यज्ञभूमि है, यहां थोड़ा सा दान करने से भी बहुत हो जाता है[18]। महाभारत में भी कुरुनन्दन भीष्म ऋषि पुलत्स्य से यह प्रश्न करते हैं कि तीर्थों से क्या फल प्राप्त होता है[19] तो उसके उत्तर में ऋषि एक–एक तीर्थ का महत्व बताते हुए प्रयाग के विषय में कहते हैं कि गंगा यमुना के संगम पर स्नान करने से दस अश्वमेध यज्ञों का फल प्राप्त होता है तथा वह स्नान करने वाला अपने कुल का उद्धार कर देता है[20]। इसी क्रम में गंगा और सरस्वती के संगम पर स्नान करने से भी अश्वमेध का फल प्राप्त होता है और स्नान करने वाले को स्वर्ग की प्राप्ति होती है[21]। प्रयाग के इसी धार्मिक महत्व को सुनकर पाण्डव भ्रातागण प्रयाग आए थे और उन्होंने प्रजापति की बेदी पर जाकर तप किया था[22]। पद्म पुराण प्रयाग माहात्म्य का वर्णन करते हुए कहता है कि प्रयाग में गंगा में स्नान करने से ब्रह्महत्यापराध से मुक्ति मिलती है तथा सात जन्मों के अर्जित पाप का अन्त हो जाता है। इसे देखने मात्र से पाप का नाश हो जाता है, गंगा जल के स्पर्श से स्वर्ग की प्राप्ति होती है तथा इसमें स्नान करने से मोक्ष की प्राप्ति होती है[23]। विष्णु पुराण तो यहां स्नान करने की महत्ता का वर्णन करते हुए ही नहीं थकता। उसके अनुसार कुंभ पर्व पर यहां स्नान करने से हजार अश्वमेध, सौ वाजपेय यज्ञों और पृथ्वी की एक लाख बार प्रदक्षिणा के बराबर फल की प्राप्ति होती है। किन्तु यहां यह उल्लेखनीय है कि पुराण जब किसी तीर्थ की महिमा का वर्णन करते हैं जो प्रायः उसी को सर्वश्रेष्ठ बता देते हैं। मत्स्य पुराण में अविमुक्त क्षेत्र (वाराणसी/काशी) के माहात्म्य के वर्णन के समय इसी प्रकार की उक्ति मिलती है जहां उसे प्रयाग से भी अधिक महत्व वाला तीर्थ बताया गया है और यह भी कहा गया है कि यहीं योगिषव्य को सिद्धि प्राप्त हुई थी[24]। स्कन्द पुराण कुम्भ के अवसर पर देश के विभिन्न भागों में स्नान, तप, दान का फल सर्वपाप नाशक बताता है[25]।

धीरे–धीरे प्रयाग के पापनाशक और स्वर्गदाई महिमा का इतना विस्तार हुआ कि लोग यहां पितरों के उद्धार के लिए पिण्डदान और तर्पण करने लगे तथा यह मानकर कि यहां स्थित वटवृक्ष में विष्णु बाल रूप में निवास करते हैं, उसके तने के पास या उससे यमुना में छलांग लगाकर प्राण विसर्जन करने लगे[26]। इस विधि से प्राण त्याग करने वालों में कुमारिल भट्ट, धंग, कल्चुरि नरेश गांगेयदेव, रामपाल, चालुक्य नरेश आहवमल्ल, उत्तरगुप्त नरेश कुमारपाल, बघेल नृपति सिंहदेव का

नाम अग्रगण्य है। रिथपुर अभिलेख में इन्हीं कारणों से प्रयाग के संगम क्षेत्र को सिद्धक्षेत्र कहा गया है। किन्तु प्राण त्याग की इस विधि को महाभारत में प्रशस्त नहीं माना गया है और कहा गया है कि न वेद के वचन से, न लोक के वचन से, प्रयाग में मरने की बुद्धि को त्यागना चाहिए[27]।

पौषमास की शुक्ल एकादशी से माघ मास[28] की शुक्ल द्वादसी तक एक मास में प्रयाग में कल्पवास की परम्परा है जिस अवधि में श्रद्धालु भक्त गण संगम की रेत में शिविर लगा कर संयम व्रत का पालन करते हुए एक बार भोजन, तीन बार विष्णु की आराधना एवं होम तथा यज्ञ का आधान करते हुए पुराणों में बताए गए 84 प्रकार के दानोंः कन्या दान, द्रव्यदान, अन्नदान, वस्त्रदान, भूदान, गोदान, आदि में से कुछ–कुछ का यथाशक्ति दान करते हैं। इसी परम्परा के क्रम में सम्राट हर्ष (606–647 ई0) यहां प्रति पांचवें वर्ष दानोत्सव का आयोजन करते थे। ह्वेनसांग के विवरणों के अनुसार उनका पांचवॉ दानोत्सव 75 दिनों तक चला था जिसमें 18 राजागण और 5 लाख भक्त गण एकत्रित हुए थे। यहां उन्होंने अपना सर्वस्व दान कर राजश्री द्वारा दिए गए वस्त्र को धारण कर वापस गए थे।

प्राचीन भारतीय साहित्य विशेषकर महाभारत और पुराण प्रयाग, गंगा और कुंभ पर्व की महिमा मंडन में जो सहयोग करते हैं उस कड़ी में केरल के कराली गांव में उत्पन्न आदि शंकराचार्य के प्रयत्नों को भी स्मरण करने की आवश्यकता है जिन्होंने यहां पधार कर अपने शिष्य सुरेश्वराचार्य की मदद से इसकी सनातनी महत्ता के बनाए रखने का अमूल्य योगदान दिया था। उन्होंने यहां दसनामी अखाड़े के संन्यासियों के स्नान करने की व्यवस्था कराई थी जो आज तक अक्षुण्ण रूप से चल रही है तथा प्रत्येक कुंभ, अर्धकुंभ या माघ स्नान पर्व पर अनेकों अखाड़ों के संन्यासी यहां आकर जुलूस के साथ स्नान करते हैं तथा धार्मिक प्रवचनों से भक्तों को ओतप्रोत करते हैं। इस आस्था और जन सम्मेलन को देखकर वर्ष 2017 में यूनेस्को द्वारा कुम्भ मेले को मानवता की अमूर्त सांस्कृतिक धरोहर के रूप में मान्यता दी गई और इसे पृथ्वी पर तीर्थ यात्रियों का सबसे बड़ा शान्तिपूर्ण जमावड़ा स्वीकार किया गया। उत्तर प्रदेश सरकार के प्रयत्नों से वर्ष 2025 का कुंभ महापर्व एक नया कीर्तिमान स्थापित करेगा, ऐसा विश्वास है।

संदर्भः

1. स्कन्द पुराण 9/31–32 में इन्द्र के श्री विहीन होने का कारण गुरु बृहस्पति के प्रति उपेक्षा का भाव बताया गया है।

   गुरोरवज्ञयाचाद्य भ्रष्टराज्यः शतक्रनुः।
   जातः सुरर्षिभिः साकं तस्मादेन समुद्धर।।
   गुरोरवज्ञया सर्वं नश्यतीति किमद्भुतं।
   ये पापिनो ह्यधर्मिष्ठाः केवलं विषयात्मकाः।।

2. विष्णु पुराण, प्रथम खण्ड, अध्याय 9; स्कन्द पुराण प्रथम खण्ड, अध्याय 9–11; संक्षिप्त पद्म पुराण (केवल हिन्दी), गीता प्रेस, गोरखपुर, संवत 2062, पृ0 12–14.
3. श्रीमद्भागवत पुराण, 1/5/18–19.
4. en.m.wikipedia.org
5. en.m.wikipedia.org, tripadvisor.in
6. मार्कण्डेय पुराण, 54/6–19

   द्वीपात्तु द्विगुणे द्वीपो जम्बुः प्लक्षोऽथ शाल्मलः।
   कुशः क्रौंचस्तथा शाकः पुष्करद्वीप एव च।।
   नवणेक्षुसुरासर्पिर्दधिदुग्धजलाब्दिभिः।
   द्विगुणैर्द्विगुणैर्वृद्धयासर्वतः परिवेष्टितः।।.....
   अयुतोच्छायस्तस्याधस्तथा विष्कम्भपर्वतः।
   प्राच्यादिषुक्रमेणैवमन्दारोगन्धमादनः।।

7. विजयेन्द्र कुमार माथुर, ऐतिहासिक स्थानावली, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, 1990, पृ0 688–689; वाल्मीकि रामायण, किष्किंधा काण्ड 40/25; विष्णु पुराण 2/2/16; वराह पुराण, अध्याय 77.
8. वाल्मीकि रामायण 1/18/8–10

ततो यज्ञे समाप्ते तु ऋतूनां षट्समत्ययुः।
ततश्च द्वादसे मासे चैत्रे नावमिके तिथौ।।
नक्षत्रे अदिति दैवत्ये स्वोच्चसंस्थेषु पंचसु।
ग्रहेषु कर्कटे लग्ने वाक्पतिविन्दुना सह।
प्रोद्यमाने जगन्नाथं सर्वलोक नमस्कृतम्।
कौसल्या जनयद् रामं दिव्य लक्षण संयुतम्।।

9. Sarojbala and Kulbhushan Mishra, History of Vedic and Ramayan Eras, 2012, P. 69.
10. देवी भागवत पुराण, पूर्वार्ध, स्कन्ध–2, अध्याय 3–4.
11. श्रीमद्भागवत पुराण, 1/17/1–6
12. पद्म पुराण, उत्तर खण्ड, गंगावतरण अध्याय, 149–150; श्रीमद्भागवत पुराण 2/9/12–13

यज्जलस्पर्शमात्रेण ब्रह्मदण्ड हता अपि।
सगरात्मजा दिवं जग्मुः केवलं देहभस्मभिः।।
भस्मीभूतांगसंगेन स्वर्याताः सगरात्मजाः।
किं पुनः श्रद्धया देवीं ये सेवन्ते धृतव्रताः।।

13. श्री मद्भागवत पुराण, द्वितीय खण्ड, नवम स्कन्ध, अध्याय 6–9; मार्कण्डेय पुराण, अध्याय 56, गंगावतारवर्णनम्; ब्रह्मवैवर्त पुराण, भाग–1, प्रकृति खण्ड, अध्याय 18 गंगोपाख्यान एवं भाग–2, अध्याय 75, जाह्नवी जन्म वृत्तांतः; नारद पुराण, भाग–1, अध्याय 6, प्रयाग एवं गंगा माहात्म्य वर्णन; नारद पुराण, प्रथम खण्ड, अध्याय 16, भगीरथ द्वारा गंगाजी का लाया जाना।
14. नारद पुराण, भाग 2, अध्याय 29, गंगा माहात्म्य वर्णन।
15. स्कन्द पुराण, भाग–2, अध्याय 80, प्रयागेश्वर माहात्म्य; वृहन्नारदीय पुराण, पूर्वभाग, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, 1989, अध्याय 60 एवं उत्तर भाग, अध्याय 38–43; विष्णु पुराण, गीता प्रेस, गोरखपुर, संवत 2070, अध्याय 8; नारदीय पुराण, अध्याय 62–63; पद्म पुराण, सृष्टि खण्ड, अध्याय 60; पद्म पुराण, स्वर्ग खण्ड, अध्याय 43–47; कूर्म पुराण, मनसुखराय मोर प्रकाशन, कलकत्ता, संवत् 2028, पूर्वार्द्ध, अध्याय 36–37 .
16. महाभारत, आरण्यक पर्व, 85/13–14

पवित्रमृषिभिर्जुष्टं पुण्यं पावनमुत्तमम्।
गंगायमुनयोर्वीर संगमं लोक विश्रुतम्।।
यत्रायजत भूतात्मा पूर्वमेव पितामहः।
प्रयागमिति विख्यातं तस्माद्भरतसत्तम।।

17. महाभारत, आरण्यक पर्व, 83/79–80

दशतीर्थ सहस्राणि षष्टिकोट्यस्तथापरा।
येषां सानिध्यमत्रैव कीर्तितं कुरु नन्दन।।
चातुर्वेदे च यत्पुण्यं सत्यवादिषु चैव यत्।
स्नात एव तदाप्नोति गंगा यमुन संगमे।।

18. महाभारत, आरण्यक पर्व, 83/ 66–80
19. महाभारत, आरण्यक पर्व, 80/28

प्रदक्षिणं यः पृथ्वीं करोत्यमित विक्रम।
किं फलं तस्य विप्रर्षे तन्मे ब्रूहि तपोधन।।

20. महाभारत, आरण्यक पर्व 82/31

21. महाभारत, आरण्यक पर्व,82 / 34
    गंगायाश्च नरश्रेष्ठ सरस्वत्याश्च संगमे।
    स्नातोऽश्वमेधमाप्नोति स्वर्गलोकं च गच्छति।।
    और भी पद्म पुराण, स्वर्ग खण्ड, 43 / 52–56
    यावदस्थीनि गंगायां तिष्ठन्ति तस्य देहिनः।
    तवद्वर्षसहस्राणि स्वर्गलोके महीयते।।
    तीर्थानां तु परं तीर्थं नदीनामुत्तमा नदी।
    मोक्षदा सर्वभूतानां महापातकिनामपि।।
    सर्वत्र सुलभा गंगा त्रिषु स्थानेषु दुर्लभा।
    गंगाद्वारे प्रयागे च गंगासागर संगमे।।
    तत्र स्नात्वा दिवं यान्ति ये मृतासतेऽपुनर्भवा।
    सर्वेषां चैव भूतानां पापोपहत चेतसाम्।
    गतिरन्यत्र मर्त्यानां नास्ति गंगा समा गतिः।।
    पवित्राणां पवित्रं या मंगलानां च मंगलम्।
    महेश्वरशिरोभ्रष्टा सर्व पापहरा शुभा।।
22. महाभारत, आरण्यक पर्व, 93 / 6–8
    गंगायमुनयोश्चैव संगमे सत्यसंगराः।
    विपाप्मानो महात्मानो विप्रेभ्यः प्रददुर्वसु।।
    तपस्विजनजुष्टां च ततो वेदीं प्रजापतेः।
    जग्मुः पाण्डुसुता राजन्ब्राह्मणैः सह भारत।।
    तत्र ते न्यवसन्वीरास्तपश्चातस्थुरुत्तमम्।
    सन्तर्पयन्तः सततं वन्येन हविषा द्विजान्।।
23. पद्म पुराण, 44 / 11
    ब्रह्म हत्यादीनि पापानि सप्तजन्मार्जितानि।
    स्नानादत्र विनाशं यान्ति तत्क्षणात्।।
    दृष्ट्वा तु हरेत पापं स्पृष्टा तु त्रिदिवं नयेत्।
    प्रसंगेनापि या गंगा मोक्षदात्ववगाहिता।।
24. मत्स्य पुराण 180 / 57
    प्रयागादपि तीर्थान्यादिदमेव महत् स्मृतम्।
    जैगिषव्यः परां सिद्धिं योगतः स महातपा।।
    और भी मत्स्य पुराण 183 / 36
    अविमुक्ते परो योगो ह्यविमुक्ते परा गतिः।
    अविमुक्ते परो मोक्षः क्षेत्रं नैवास्ति तादृशम्।।
25. स्कन्द पुराण, विश्वेश्वर माहात्म्य, 95 / 105–110
    अथ कुम्भे जोवि स्थिते मेषे च सूर्ये सति।
    तत्र स्नानं कुरुक्षेत्रे वा प्रयागे वा महोदधौ।।
    कृतं यत्सनानमविद्या पुण्यं तेन विनश्यति।
    शतक्रतु प्रिया गंगा यत्र स्नानं पुण्यदं भवेत।।
    यत्र स्नानेन मृत्युं तारयेदपि मुनीश्वर।
    तत्रस्नानं कुरुक्षेत्रे वा प्रयागे वा महोदधौ।।
    अस्मिन्माने प्रयागे तु स्नानं कुरुक्षेत्रे वा पुनः।
    महोदधौ वा कृतं यत्स्नानं पुण्यफलप्रदम्।।
    कुम्भे जोवि स्थिते मेषे च सूर्ये सति यत्स्नानं कृतम्।
    तत्स्नानं पुण्यदं प्रोक्तं सर्वपापप्रणाशनम्।। और भी देखिए पद्म पुराण, उत्तर खण्ड, 228 / 39–42
26. पद्म पुराण

वटमूलं समाश्रित्य यस्तु प्राणान्परित्यजेत्।
सर्वलोकानतिक्रम्य रुद्रलोकं स गच्छति।।

27. महाभारत, आरण्यक पर्व, 83/78
न वेदवचनात्तात न लोकवचनादपि।
मतिरुत्क्रमणीया ते प्रयागमरणं प्रति।।
28. कूर्म पुराण, 38/1–2
षष्टिस्तीर्थ सहस्राणि षष्टिस्तीर्थ शतानि च।
माघमासे गमिष्यन्ति गंगायमुन संगमे।।
गवांशतसहस्रस्य सम्यग्दत्तस्ययत्फलं।
प्रयागेमाघमासेतुत्र्यहंस्नात्स्यतत्फलम्।।